ओ३म्
ऋग्वेद यजुर्वेद सामवेद अथर्ववेद
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 फरवरी 2022
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, १२२
युगाब्द-५१२२, अंक-१४७, वर्ष-१४
माघ विक्रमी २०७८ (फरवरी 2022)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि बलमसि बलं मयि धेह्योजोऽस्योजो मयि धेहि मन्युरसि मन्युं मयि धेहि सहोऽसि सहो मयि धेहि ॥ –यजु:० १०। ९

व्याख्यान–हे स्वप्रकाशस्वरूप! अनन्ततेज! [(तेजोऽसि तेजो मयि धेहि)] आप अविद्यान्धकार से रहित हो, किंच सत्यविज्ञान, तेजःस्वरूप हो। आप कृपा-दृष्टि से मुझ में वही तेज धारण करो, जिससे मैं निस्तेज दीन और भीरु कहीं कभी न होऊं। हे अनन्तवीर्य परमात्मन्! [(वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि)] आप वीर्यस्वरूप हो [(मुझ में भी वही वीर्य सदा धारण करो)] हे अनन्तबल! [(बलमसि बलं मयि धेहि)] आप बलस्वरूप हो,] वह सर्वोत्तम बल स्थिर मुझ में भी रक्खें। हे अनन्तपराक्रम! [(ओजोऽस्योजो मयि धेहि)] आप ओजः=पराक्रमस्वरूप हो, सो मुझमें भी उस पराक्रम को सदैव धारण करो। हे दुष्टानामुपरि क्रोधकृत्! [(मन्युरसि मन्युं मयि धेहि)] आप दुष्टों पर क्रोध करनेवाले हो] मुझ में भी दुष्टों पर क्रोध धारण कराओ। [(सहोऽसि सहो मयि धेहि] हे अनन्तसहनस्वरूप! मुझ में भी आप सहनसामर्थ्य धारण करो, अर्थात् शरीर इन्द्रिय मन और आत्मा इनके तेजादि गुण कभी मुझ में से दूर न हों। जिससे मैं आपकी भक्ति का स्थिर अनुष्ठान करूँ, और आपके अनुग्रह से संसार में भी सदा सुखी रहूँ ।।९।।

सम्पादकीय

अभिव्यक्ति और हिंसा ...?

हमारे इस पुरातनतम् राष्ट्र में सृष्टि के प्रारम्भ से सत्य एवं तथ्य पर आधारित अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता सदैव बनी रही है, जिसे हम अपने विद्या के मूल श्रोतों वेदों एवं शास्त्रों में पूर्वपक्ष तथा उत्तर पक्ष के रूप में पढ़ते-देखते आ रहे हैं। ऋषि-मुनियों द्वारा सम्पोषित इस हमारी परम्परा में सृष्टि के मूल परमपिता परमात्मा के होने न होने पर तथ्ययुक्त तर्कपूर्वक विचार शास्त्रों में है। और जब ईश्वर पर ही तर्कपूर्वक विचार करने की स्वतन्त्रता हो, तब अन्य किस पर प्रश्न-प्रतिप्रश्न एवं उत्तर न हो, ऐसा सम्भव ही नहीं था, न अब है और न ही भविष्य में सम्भव होगा। अर्थात् सत्यान्वेषण के लिए विचार-विमर्श सदा होता रहा, होता है और होता रहेगा। किन्तु विचार-विमर्श की उस सनातन परम्परा की छाया में किसी को भी ऐतिहासिक महान पूर्वजों का एवं आस्था-विश्वासजन्य मान्य पूजनीय देवी-देवताओं का भौंड़ा परिहास, अपमान जनक प्रस्तुति तथा गाली-गलौज देने की अभिव्यक्ति की छूट नहीं होनी चाहिए! किन्तु प्रश्न फिर वही है कि- क्या ऐसी छूट नहीं है? तो इसका उत्तर है कि जबसे इस देश में एक वेदमत को छोड़कर लोग भिन्न मतवादी होकर मनमानी व्याख्याओं के बल पर अपने-अपने मत-मजहब-समुदाय बनाने लगे हैं, तभी से अपने पूज्यों को श्रेष्ठ एवं दूसरे के पूज्यों को हेय, न्यून अथवा अपमानित करने का एक फैशन सा चल पड़ा है। पुनरपि यहाँ स्मरणीय है कि जब तक इस देश में आततायी कबीलाई बर्बरतापूर्ण एक-दूसरे को नष्ट कर देने का प्रण लिए हुए मुगल-मुस्लिम नहीं आये थे, तब तक यह ऊँच-नीच, सम्मान-अपमान करने, दिखाने रीति पारस्परिक सहनीय स्थिति में थी। किन्तु सिन्ध में मोहम्मद बिन कासिम का आक्रमण हुआ हो, सोमनाथ पर महमूद गजनी का, बाबर का, अकबर का, तैमूर का या अब्दाली का इन आक्रमणकारियों में से कौन हुआ? जिसने हमारी सत्य सनातन मान्यताओं को धूलिसात, अपमानित न किया हो? फिर तत्कालीन आस्था-विश्वासों की तो बात ही क्या? इसी प्रकार की कुरीति अपने शासनकाल से अब तक ईसाई मिशनरियाँ भी अपनी बपौती, अपना मौलिक अधिकार समझती हैं, आए दिन चर्चा में, कान्वेंट स्कूलों में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, माता सीता, श्रीकृष्ण जी आदि

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष .... महापुरुषों का अपमान एवं ईसामसीह का महिमा-मण्डन करते रहते हैं और जहाँ बहुसंख्यक हुए कि हत्याएं बलात्कार आदि कुकृत्य करने में सबसे आगे देखे जाते हैं।

स्वतन्त्रता पूर्वकाल में इसी प्रकार का बखेड़ा कुछ जाहिल मानसिकता के लोग खड़ा करने में लगे ही रहते थे, इसी श्रृंखला में आर्यजनों को नीचा दिखाने के उद्देश्य से दो पुस्तकें छापी गयी थी- 1. **''कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी''** एवं 2. **''उन्नीसवीं सदी का महर्षि''** इन दोनों पुस्तकों में भगवान श्री कृष्ण एवं ऋषिवर दयानन्द पर निन्दनीय मनगढ़न्त आरोप लगाए गये थे, जिसके प्रत्युत्तर में आर्य जगत के **सुप्रतिष्ठित लेखक पं. चमूपति जी** ने तर्क, तथ्यपूर्वक प्रमाणों सहित एक पुस्तक लिखी **''रंगीला रसूल''**। किन्तु जब श्री कृष्ण जी व ऋषि दयानन्द पर भद्दी पुस्तकें लिखी गयी तब कोई मुस्लिम नेता तो क्या भर्त्सना करते सेकुलर हिन्दू नेताओं ने भी कुछ न बोला। परन्तु **''रंगीला रसूल''** प्रकाशित होते ही महाशय राजपाल जो कि इस पुस्तक के प्रकाशक थे, उनके ऊपर जानलेवा हमले होने लगे और आखिर में 6 अप्रैल 1929 को जेहादी आतंकियों ने उनका बलिदान ले लिया और ऐसा एक ही प्रसंग नहीं है, अपितु अनेक घटनाएँ इतिहास में दर्ज हैं कि जब अन्यों को बोला-लिखा जाएगा, तब कुछ नहीं, किन्तु जब प्रतिक्रिया स्वरूप कोई भी विश्वभर का व्यक्ति सत्यता पर आधारित इस्लाम की पोल खोलेगा तब यह क्रूरकर्मा जेहादी लोग **''मौत का फतवा''** जारी कर देंगे। मुस्लिम मजहबियों की यह एक अमानवीय प्रवृत्ति है कि- यह अपने समुदाय के वहशियों, जाहिलों की भी निन्दा नहीं करते, न कभी उन्हें धिक्कारते-दुत्कारते हैं, लेकिन यदि कोई प्रतिक्रिया स्वरूप इनकी सत्यता लिख दे, दिखा दे या चित्रादि बना दे तब यह चिल्लाने लगते हैं कि **'इस्लाम खतरे में है'** फलस्वरूप कोई-कोई नया वहशी जाहिल मानसिकता का आतंकी मरने-मारने को तैयार हो जाता है। इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता कि- लेखक इस्लाम ही मानने वाला है या गैर इस्लामिक। उदाहरण भरे पड़े हैं- सलमान रश्दी, तसलीमा नसरीन। किन्तु तथाकथित कलाकार मकबूल फिदा हुसैन हिन्दू मान्यताओं पर कूची चलाता रहा तो इसका कुछ नहीं हैं- **पं कमलेश तिवारी** को बलिदान हुए अभी बहुत दिन नहीं बीते अभी-अभी गुजराज में एक युवक किशन भारवाड़ को एक कार्टून बनाने के फलस्वरूप नृशंसता पूर्वक मौत के घाट उतार दिया गया। इस नृशंस हत्या के षड्यन्त्रकारी गुजरात से पाकिस्तान तक फैले हुए हैं, किन्तु किशन भारवाड़ की नृशंस हत्या की निन्दा-भर्त्सना किस मुस्लिम नेता ने की है? और यदि इसी प्रकार के किसी कार्टून बनाने-बनवाने पर किसी मुस्लिम युवक की हत्या कोई हिन्दू कहलाने वाला युवक कर देता, तब क्या होता? सारा मीडिया जगत, सेकुलर नेता, मुस्लिम नेता एवं अन्य भी अल्पसंख्यक रहने वाले भीरू देश को सर पर न उठा लेते? यह दोहरा व्यवहार बहुसंख्यक सनातनधर्मियों के भीतर क्या धीरे-धीरे प्रतिक्रिया के अंकुर न पैदा करेगा? क्या यथार्थवादियों को यह भेदभाव भीतर से कचोटेगा नहीं?

पाठकगणों! यह सत्य है कि राजनीति के अपने निहित स्वार्थ एवं स्वार्थ के पीछे अपने-अपने वोटबैंक की चिन्ता में सभी राजनैतिक दल समाज को बांटने के षड्यन्त्र अहर्निश करते रहते हैं। आर्य-आर्या को राजनीति के बांटने वाले षड्यन्त्रों से बचना अति आवश्यक है, किन्तु षड्यन्त्रकारी राजनैतिक दलों, पार्टियों एवं नेताओं के भय से आर्य-आर्या यथार्थवादी दृष्टिकोण की अवहेलना तो नहीं कर सकते हैं, पं. लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द एवं महाशय राजपाल जैसे भेदभाव, अपना-पराया से रहित मानव मात्र के उन्नायक महापुरुषों के बलिदान को तो नहीं भूल सकते हैं। यह जो मुस्लिमों का खुला क्रूर इस्लामी जेहाद का नंगा नाच हो रहा है, इससे तो आंखे नहीं मूंद सकते हैं, अभिव्यक्ति की आजादी एक ही ओर से होती रहे और दूसरा करे तो सीधी मारकाट? डायरेक्ट ऐक्सन? सीधी-सीधी हिंसा? ऐसा नहीं होना चाहिए, इसकी छूट किसी को भी नहीं दी जा सकती है। हम सभी को यथार्थवादी दृष्टिकोण के साथ इस एक पक्षीय हिंसा का विरोध तो नित्य निरन्तर करते ही रहना होगा, आर्य निर्माण के साथ-साथ।

-आचार्य हनुमत् प्रसाद उपाध्याय, अध्यक्ष, आर्य महासंघ

18 जनवरी-16 फरवरी-2022 **माघ** ऋतु- शिशिर

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
	पुष्य कृष्ण प्रतिपदा 18 जनवरी	आश्लेषा कृष्ण द्वितीया 19 जनवरी	आश्लेषा कृष्ण द्वितीया 20 जनवरी	मघा कृष्ण तृतीया 21 जनवरी	पू० फाल्गुनी कृष्ण चतुर्थी 22 जनवरी	उ० फाल्गुनी कृष्ण पंचमी 23 जनवरी
हस्त कृष्ण षष्ठी 24 जनवरी	चित्रा कृष्ण सप्तमी/अष्टमी 25 जनवरी	स्वाती कृष्ण नवमी 26 जनवरी	विशाखा/अनुराधा कृष्ण दशमी 27 जनवरी	ज्येष्ठा कृष्ण एकादशी 28 जनवरी	मूल कृष्ण द्वादशी 29 जनवरी	पूर्वाषाढ़ा कृष्ण त्रयोदशी 30 जनवरी
उत्तराषाढ़ा कृष्ण चतुर्दशी 31 जनवरी	श्रवण कृष्ण अमावस्या 1 फरवरी	धनिष्ठा शुक्ल प्रतिपदा/द्वितीया 2 फरवरी	शतभिषा शुक्ल तृतीया 3 फरवरी	पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल चतुर्थी 4 फरवरी	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल पंचमी 5 फरवरी	रेवती शुक्ल षष्ठी 6 फरवरी
अश्विनी शुक्ल सप्तमी 7 फरवरी	भरणी शुक्ल अष्टमी 8 फरवरी	कृतिका शुक्ल अष्टमी 9 फरवरी	रोहिणी शुक्ल नवमी 10 फरवरी	मृगशिरा शुक्ल दशमी 11 फरवरी	आर्द्रा शुक्ल एकादशी 12 फरवरी	आर्द्रा शुक्ल द्वादशी 13 फरवरी
पुनर्वसु शुक्ल त्रयोदशी 14 फरवरी	पुष्य शुक्ल चतुर्दशी 15 फरवरी	आश्लेषा शुक्ल पूर्णिमा 16 फरवरी	 23 जनवरी नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जयन्ती			

17 फरवरी-18 मार्च-2022 **फाल्गुन** ऋतु- वसन्त

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
				मघा कृष्ण प्रतिपदा 17 फरवरी	पू० फाल्गुनी कृष्ण द्वितीया 18 फरवरी	उ० फाल्गुनी कृष्ण तृतीया 19 फरवरी
हस्त कृष्ण चतुर्थी 20 फरवरी	चित्रा कृष्ण पंचमी 21 फरवरी	स्वाती कृष्ण षष्ठी 22 फरवरी	विशाखा कृष्ण सप्तमी 23 फरवरी	अनुराधा कृष्ण अष्टमी 24 फरवरी	ज्येष्ठा कृष्ण नवमी 25 फरवरी	मूल कृष्ण दशमी 26 फरवरी
पूर्वाषाढ़ा कृष्ण एकादशी/द्वादशी 27 फरवरी	उत्तराषाढ़ा/श्रवण कृष्ण त्रयोदशी 28 फरवरी	धनिष्ठा कृष्ण चतुर्दशी 1 मार्च	शतभिषा कृष्ण अमावस्या 2 मार्च	पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल प्रतिपदा 3 मार्च	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल द्वितीया 4 मार्च	रेवती शुक्ल तृतीया 5 मार्च
अश्विनी शुक्ल चतुर्थी 6 मार्च	भरणी शुक्ल पंचमी 7 मार्च	कृतिका शुक्ल षष्ठी 8 मार्च	कृतिका शुक्ल सप्तमी 9 मार्च	रोहिणी शुक्ल अष्टमी 10 मार्च	मृगशिरा शुक्ल नवमी 11 मार्च	आर्द्रा शुक्ल नवमी 12 मार्च
पुनर्वसु शुक्ल दशमी 13 मार्च	पुष्य शुक्ल एकादशी 14 मार्च	आश्लेषा शुक्ल द्वादशी 15 मार्च	मघा शुक्ल त्रयोदशी 16 मार्च	पू० फाल्गुनी शुक्ल चतुर्दशी 17 मार्च	उ० फाल्गुनी शुक्ल पूर्णिमा 18 मार्च	

सहज सरल सांख्य-१९

- आचार्य सतीश, दिल्ली

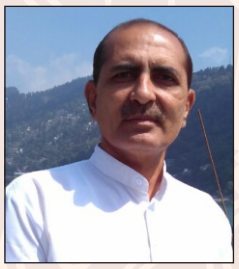

लेकिन वेद के अपौरुषेय होने से व उसके अतीन्द्रिय होने से उपरोक्त तीन साधनों से उसके अर्थ को कैसे जाना जा सकता है?

वेदार्थ अतीन्द्रिय नहीं है। वेद से जो यज्ञ आदि विशिष्ट विधिपूर्वक अनुष्ठान किए जाते हैं वे सब स्वरूप से ही प्रत्यक्ष हैं और उनका फल प्रत्यक्ष में दिखता है।

दूसरा वेद के अपौरुषेय होने पर भी वैदिक शब्दों की निज (स्वाभाविक) शक्ति अर्थात् शब्दार्थ है क्योंकि शब्द बिना अर्थ के नहीं होता। उस शब्दार्थ से मनुष्य भी अर्थ को जान जाता है। इस अर्थ को आदि महर्षियों ने अध्यात्म प्रत्यक्ष व भगवत प्रेरणा से साक्षात् किया है। जिस प्रकार उन्हें शब्द -उच्चारण की प्रेरणा प्राप्त होती है। उसी प्रकार शब्द सम्बन्ध की भी। उसके अनुसार वे शब्दार्थ का उपदेश करते हैं। इतने अंश को लेकर वेद शब्दों में भी तीन अर्थ बोधन साधनों की सम्भावना स्पष्ट हो जाती है।

प्रत्यक्ष के योग्य इन्द्रियग्राह्य पदार्थ और अप्रत्यक्ष के अयोग्य अतीन्द्रिय पदार्थों में भी ज्ञान की उत्पत्ति होने से शब्दार्थ की सिद्धि होती है। आप्त के द्वारा अतिन्द्रिय पदार्थ का बोध कराने से जिज्ञासु उस पद के उसी अर्थ को समझने लगता है।

शब्द कार्य है और कार्य अनित्य होता है अतः शब्द राशि रूप में वेद नित्य नहीं है। श्रुति भी उसे कार्य ही कहती है।

जब अनित्य है तो वेद को भी पुरुष प्रणीत क्यों न माना जाए?

जीव पुरुष अल्पज्ञ व अल्पशक्ति होने से सर्वज्ञकल्प समस्त विद्याओं के स्थान वेद की रचना में असमर्थ रहता है। तो वेद को किसी भी जीव ने बनाया होगा ऐसा भी सत्य नहीं।

लेकिन मुक्त जीव तो इसकी रचना कर सकता है?

बद्ध जीव तो अल्पज्ञ, अज्ञानी है ही, मुक्त जीव में भी वह शक्ति नहीं रहती, जिससे वह वेद को बना सके। औपोरुषेय होने से ही वेद को नित्य नहीं माना जा सकता। जैसे किसी पुरुष के द्वारा रचना न किया हुआ नित्य नहीं होता। लेकिन अंकुर आदि का अनित्यत्व उनके अपौरुषेय होने से नहीं अपितु उनके नष्ट होने से है।

जिस पदार्थ का कर्त्ता प्रत्यक्ष न हो लेकिन बुद्धि में ऐसा आए कि यह रची गई, बनाई गई है वह रचना भी पौरुषेय हो सकती है।

लेकिन वेदों के साथ ऐसा नहीं है वे प्रादुर्भूत हुए हैं, भवगद् प्रेरणा से अभिव्यक्त हुए हैं अतः वे अपौरुषेय है तथा ज्ञान दृष्टि से नित्य हैं।

परमात्मा की ज्ञान क्रिया स्वाभाविक है, वेद में अपनी स्वाभविक अर्थ बोधन शक्ति है अतः वह स्वतः प्रमाण है। यदि वेद के शब्द की अर्थबोधन शक्ति का हमें ज्ञान है तो उससे हमें जिस अर्थ का बोध होगा, उसके प्रामाण्य के लिए अन्य किसी साधन की आवश्यकता नहीं है।

कभी वस्तु न होती हुई भी प्रतीत हो जाती है, ऐसा क्यों है?

जैसे अन्धकार में सांप के वहाँ न होते हुए भी रस्सी को ही सांप समझ लिया जाता है। इसी प्रकार वेदों तथा जगत् के अस्तित्व को समझ लिया होगा।

यहाँ ऐसा नहीं है कि सर्प का अस्तित्व नहीं है क्योंकि असत् की प्रतीति नहीं होती। जो वस्तु सर्वथा असत् है यदि उसकी प्रतीति हो सके तो मनुष्य के सिर पर सींग प्रतीत होने चाहिए। लेकिन वस्तु का सद्रूप न रहने पर भी उसका ज्ञान रहता है। अतः यह कहना कि ज्ञान सदैव सत् वस्तु का होता है ठीक नहीं है।

तो क्या भ्रान्तिस्थलों में सत् और असत् से विलक्षण किसी अनिर्वचनीय वस्तु का भान होता है?

यह भी ठीक नहीं है क्योकि ऐसे पदार्थ का संसार में सर्वथा अभाव है जो न सत् हो, न असत् हो।

तो क्या यह मान लिया जाए कि अन्य का अन्य में ज्ञान हो जाता है? जैसे रस्सी में सर्प का।

लेकिन यह तो अपने ही कथन का विरोध है। यदि यह जान लिया जाए कि अन्य का अन्य में ज्ञान हो रहा है अर्थात् रस्सी में सर्प की प्रतीति हो रही है तो फिर वहाँ सर्प का ज्ञान रहेगा ही नहीं। इसलिए जब वह ज्ञान रहता है तब उसे अन्यथा ज्ञान नहीं कहा जा सकता।

तो फिर इसका वास्तविक समाधान क्या है?

जब कहते हैं कि 'यह सर्प है' अर्थात् पुरोवर्ती वस्तु 'यह' अर्थात् रस्सी के सामान्य धर्म अर्थात् वक्रता आदि जंगल में स्थित सर्प का स्मरण करा देते हैं। भय, शंका आदि उस स्मरण के निमित्त बन जाते हैं। हालांकि जंगल में स्थित सर्प और रस्सी का कोई संसर्ग नहीं है लेकिन उपरोक्त निमित्त अर्थात् भय शंका आदि उसका असंसर्ग नहीं होने देते हैं। तब पुरोवर्ती वस्तु अर्थात् रस्सी का जंगल में स्थित सर्प के साथ संसर्ग समझ लिया जाता है। वास्तविकता यह है कि हम उनके असंसर्ग को ग्रहण नहीं कर पाते और वे एक दिखने लगते हैं। लेकिन जब उनके असंसर्ग का ग्रहण होता है तो न तो सर्प की स्वरूप से बाधा होती है, न जंगल से उसका अस्तित्व समाप्त होता है। और हमारा ज्ञान भी वैसा ही रहता है, केवल रस्सी के साथ उसका संसर्ग हट जाता है। इस प्रकार संसर्ग से सर्प बाधित होता है स्वरूप से नहीं।

इसी प्रकार जगत में सभी पदार्थ कारण रूप से बाधित नहीं होते हैं कार्य रूप में आते रहते हैं और छिपते रहते हैं, लेकिन कारण रूप में सदा बने रहते हैं, अबाधित रहते हैं। इसी को सांख्य में सदसत्ख्याति कहा है अर्थात् कारणरूप में प्रकृति विद्यमान रहती है, कार्यरूप में परिवर्तित होती रहती है।

क्रमश ....

संध्या काल

माघ-मास, शिशिर-ऋतु, कलि-5122, वि. 2078
(18 जनवरी 2022 से 16 फरवरी 2022)
प्रातः कालः 6 बजकर 00 मिनट से (6.00 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 30 मिनट से (6.30 P.M.)

फाल्गुन-मास, वसन्त-ऋतु, कलि-5122, वि. 2078
(17 फरवरी 2022 से 18 मार्च 2022)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

गृहस्थ सम्बन्ध : भाग-३०

- आचार्य संजीव आर्य, मु०नगर

विदेशी संस्कृतियों (अपकृतियों) के अंधानुकरण में हुआ हो चाहे सत्ताओं के बल के दबाव में लेकिन यह सत्य है कि इस उत्तम कहलाने वाले गृहस्थ में स्त्रियों का अपमान होता रहा है। यह एक कटु सत्य है कि संसार भर में स्त्रियों को द्वतियक स्तर का प्राणी माना जाता रहा है। किसी ने खेती, किसी ने मनोरंजन का साधन माना, तो कइयों ने मन्दिरों में भगवत सेवा के लिए दान करा लिया, एक रानी के साथ सैंकडो स्त्रियों को उनके दुर्भाग्य की चादर में लपेटकर फेंक दिया जाता था, लम्बे काल तक काफिरों और हारे हुए देशों की स्त्रियों से शाहों के हरमों को भरकर जन्नती अहसास कराया जाता रहा। किन्तु हम बड़े ही विश्वास के साथ कह सकते हैं कि यह सब प्रथाएँ या परम्पराएँ ऋषियों एवं वर्णाश्रम धर्म की उन्नति के काल की नहीं है। क्योंकि ऋषि परम्परा का विचार तो यह है-

प्रजनार्थं महाभागाः पूजार्हा गृहदीप्तयः।
स्त्रियः श्रियश्च गेहेषु न विशेषोऽस्तिकश्चन॥१
उत्पादनमपत्यस्य जातस्य परिपालनम्।
प्रत्यहं लोकयात्रायाः प्रत्यक्षं स्त्रीनिबन्धनम्॥२
अपत्यं धर्मकार्याणि शुश्रुषा रतिरुत्तमा।
दाराधीनस्तथा स्वर्गः पितृणामात्मनश्च ह॥३
यथा वायुं समाश्रित्य वर्तन्ते सर्वजन्तवः।
तथा गृहस्थमाश्रित्य वर्त्तन्ते सर्व आश्रमाः॥४

अर्थ- हे पुरुषों! सन्तानोत्पत्ति के लिए महाभाग्योदय करने हारी, पूजा के योग्य, गृहाश्रम को प्रकाश करती, सन्तानोत्पत्ति करने कराने हारी घरों में स्त्रियाँ हैं, वे श्री अर्थात् लक्ष्मी स्वरूप होती हैं। क्योंकि लक्ष्मी, शोभा, धन और स्त्रियों में कुछ भेद नहीं है।

हे पुरुषों! अपत्यों की उत्पत्ति, उत्पन्न का पालन करने आदि लोक व्यवहार को नित्यप्रति, जो कि गृहाश्रम का कार्य होता है, उसका निबन्ध करने वाली प्रत्यक्ष स्त्री है।

सन्तानोत्पत्ति, धर्म-कार्य, उत्तम सेवा और रति तथा अपना और पितरों का जितना सुख है, वह सब स्त्री ही के अधीन होता है।

जैसे वायु के आश्रय से सब जीवों का वर्तमान सिद्ध होता है, वैसे ही गृहस्थ के आश्रय से ब्रह्मचारी वानप्रस्थ और सन्यासी अर्थात् सब आश्रमों का निर्वाह गृहस्थ के आश्रय से होता है।

संसार में आज अनेकों लोग स्त्री सम्मान के झण्डे को उठाकर घूमते हैं किन्तु सत्य तो यह हैं कि जिन स्त्रियों के सम्मान का आदेश स्वयं भगवान वेद देता है और ऋषियों की परम्परा ने जिन स्त्रियों का सम्मान किया और सभी आर्यों से कराया है, उनका सम्मान निश्चित ही होते रहना चाहिए था। परन्तु जो आज स्त्रियों को अधिकार देने के ध्वजवाहक है उन्हीं विदेशियों के कारण और अपने घर मे फैल चुकी अविद्या के कारण हमारे पूर्वजों ने अपनी पूज्या स्त्रियों का सम्मान नहीं किया उल्टे उनका अपमान ही किया जिसने परिणाम स्वरूप यह समाज बड़े विनाश को प्राप्त हो गया। ऋषि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखते हैं कि गलत बात का छोड देना ही उत्तर है। अतः स्त्रियों के सम्बन्ध में हो रहे दुर्व्यवहार को जितना शीघ्र हो सके छोड़ देना चाहिए। इसका आह्वान ऋषिवर ने तो 1875 ई0 में और उससे पूर्व ही कर दिया था। अनेकों लोग उनके आह्वान को सुनकर आगे बढ़े और अपना सर्वस्व झोक दिया, स्त्री शिक्षा का सूत्रधार बनने में। वे सब धन्यवाद के पात्र हैं। तीन बिन्दु मुख्य रूप से विचारणीय हैं कि स्त्री-लक्ष्मी हैं, गृहाश्रम के कार्यों की निबन्ध कर्तृ हैं। गृहस्थ का सब सुख स्त्री के आधीन है और ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ एवं संन्यासी का निर्वाह गृहस्थ के आश्रय से होता है। वास्तव मे यदि देखा जाय तो समाज क्या है? क्यों हैं? और किसके लिए है? इसमें सबसे मुख्य महत्व का क्या है यदि इसका एक कोई समीचीन उत्तर है तो वह है 'गृहस्थ'। इसी गृहस्थ की शोभा स्त्री है, पूर्व के लेखों में हम सब विचार कर चुके हैं कि नीतिकारों ने गृहणी को ही श्रेष्ठ कहा है। बिना गृहणी/स्त्री के घर शोभित नहीं होते वे तो बस श्मशान ही रह जाते हैं। यह भी उतना ही सत्य है कि जिन घरों में स्त्रियाँ नहीं रहती वे घर ठीक-ठीक व्यवस्था वाले रह ही नहीं पाते न उनकी सन्ताने उत्तम हो पाती हैं और न उनके पितर चैन से सो पाते हैं। यदि किसी घर में स्त्रियाँ सुखी नहीं हैं तो स्मरण रहे दुःखी मन वाली के हाथ की रोटी खाकर आप सुख से नहीं रह सकते। क्योंकि वही तो घर के सब सुखों की अधिष्ठात्री देवी है। किसी भी समाज या राष्ट्र को यदि उत्तम भावी पीढ़ी चाहिए तो उसे अपनी इन कुल देवियों का सम्मान करना ही होगा। अर्थात् व्यक्ति से लेकर राष्ट्र तक सब उन्नतियों के लिए स्त्रियों की उन्नति निश्चित ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसीलिए ऋषि मुनियों से लेकर सभी विद्वजन का यही मानना है कि स्त्री और पुरुष दोनों मिलकर गृहाश्रम के अभ्युदय को बढ़ाया करें क्योंकि-

यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही॥५
स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥६
सर्वेषामपि चैतेषां वेदस्मृतिविधानतः।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः स त्रीनेतान् बिभर्ति हि॥७

अर्थः- जिससे ब्रह्मचारी वानप्रस्थ और संन्यासी इन तीन आश्रमियों को अन्नवस्त्रादि दान से नित्यप्रति गृहस्थ धारण पोषण करता है, इसलिये व्यवहार में गृहाश्रम सब से बड़ा है।

हे स्त्री पुरुषों! जो तुम अक्षय मुक्ति-सुख और इस संसार के सुख की इच्छा रखते हो, तो जो दुर्बलेन्द्रिय और निर्बुद्धि पुरुषों के धारण करने योग्य नहीं है, उस गृहाश्रम को नित्य प्रयत्न से धारण करो।

वेद और स्मृति के प्रमाण से सब आश्रमों के बीच में गृहाश्रम श्रेष्ठ है। क्योंकि यही आश्रम ब्रह्माचारी आदि तीनों आश्रमों का धारण और पालन करता है।

क्रमश ....

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट- **www.aryanirmatrisabha.com** पर उपलब्ध है। अतः आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अतः पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक- **www.aryanirmatrisabha.com/हिन्दी में पत्रिका** पर जाएं।

आर्य समाज का द्वितीय नियम

-आर्य कृष्ण निवाड़ी, मोदीनगर

आज आर्य समाज के द्वितीय नियम पर चर्चा करेंगे। आर्य समाज का दूसरा नियम है- **ईश्वर सच्चिदानंद स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनंत, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वांतर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टि करता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।**

आर्य समाज के द्वितीय नियम में महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती जी ने ईश्वर के बीस नामों की चर्चा की है। आइए अब इन नामों पर क्रमशः वेद के अनुसार विचार करते हैं। आओ जानते हैं कि ईश्वर के गुण कैसे हैं? विस्तार भय के कारण इस नियम पर दो भागों में चर्चा करेंगे। आज प्रथम दस गुणों पर विचार करेंगे।

ईश्वर का प्रथम गुण सच्चिदानन्द स्वरूप है। अर्थात् यहाँ ईश्वर के तीन गुण दिए हैं- सत्, चित् और आनन्द। सत् अर्थात् परमेश्वर की सत्ता है, उसका अस्तित्व है, और उसकी सत्ता सर्वत्र व्याप्त है। प्रमाण- **'ईसावास्यमिदं सर्वं यत्किं च जगत्यां जगत्।'** (यजुर्वेद ४०/१) अर्थात् यह सम्पूर्ण जगत् उस परमेश्वर से आच्छादित है। **'योसावादित्ये पुरुषः सोसावहम्। ओ३म् खं ब्रह्म।'** (यजुर्वेद ४०/१७) अर्थात् वह परमेश्वर जिसका नाम ओम् है वही सूर्यादि लोकों में तथा पृथ्वी आदि लोकों में सर्वत्र व्याप्त है। वही सबसे बड़ा है। **'स ओतः प्रोतश्च विभुः प्रजासु।'** अर्थात् वह परमेश्वर जड़ व चेतन जगत् में सर्वत्र व्याप्त है।

चित् अर्थात् वह परमेश्वर जड़ (जैसा कि अधिकांश बंधु मानते और पूजते हैं) नहीं है। वह चेतन है अर्थात् ज्ञानादि गुणों से युक्त है। क्योंकि वेद परमेश्वर की वाणी है और अथाह ज्ञान का भण्डार है। महाराज मनु ने लिखा है, **'सर्वज्ञानमयो हि सः'** (मनु० २/७) अर्थात् वेद ज्ञान के अगाध भण्डार हैं। महृषि कणाद कहते हैं कि, **'बुद्धिपूर्वा वाक्य कृतिर्वेदे'** (वैशेषिक ६/१/१) अर्थात् वेद की रचना बुद्धिपूर्वक की गई है। महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने चित् शब्द की निरुक्ति करते हुए सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है- **'यश्चेतति चेतयति संज्ञापयति सर्वान् योगिनस्तच्चित्परं ब्रह्म'** अर्थात् जो चेतनस्वरूप सब जीवों को चिताने और सत्यासत्य का जाननेहारा है, इसलिए उस परमात्मा का नाम चित् है।

आनन्द- वह परमेश्वर स्वयं आनन्द स्वरूप और सबको आनन्द देने वाला है। **'स्वर्यस्य च केवलं'** (अथर्ववेद १०/८/१) अर्थात् जिसका सुख ही केवल स्वरूप है। **'यस्य च्छायामृतं'** (यजुर्वेद २४/१३) अर्थात् उस परमेश्वर का आश्रय ही मुक्तिसुखदायक है।

निराकार- वह परमेश्वर निराकार है साकार नहीं। अर्थात् परमेश्वर कभी शरीर धारण नहीं करता, अवतार नही लेता। **'बिन पग चलहिं सुनहिं बिनु काना। बिनु कर काज करहिं विधि नाना।। आनन रहित सकल रस भोगी। बिन बाणी बक्ता बड़ जोगी।।'** (रामचरित्र मानस) अर्थात् वह परमेश्वर बिना पैरों के चलता है बिना हाथ के सब काम करता है बिना मुंह के विभिन्न प्रकार के रसों को रखता है उनका स्वाद जानता है और बिना वाणी के, जिह्वा के वह सबसे बड़ा वक्ता है। उसने सृष्टि के प्रारंभ में चारों वेदों का ज्ञान अग्नि आदि ऋषियों को दिया। उपनिषद् कहता है कि **'अपाणिपादो जवनो गृहीत्वा पश्यत्यचक्षुः स श्रृणोत्यकर्णः'** अर्थात् परमेश्वर बिना हाथ पैर वाला है, बिना नेत्रों और कानों वाला है फिर भी अपने सामर्थ्य से सभी कार्य करता है अर्थात् वह निराकार है। यजुर्वेद के चालीसवें वें अध्याय के आठवें मंत्र में उस परमेश्वर को बिना नस-नाडियों वाला बताया गया है। **'स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं'** (यजुर्वेद ४०/८) अर्थात् वह परमेश्वर अकायम (स्थूल सूक्ष्म और कारण शरीर से रहित) है। वह छिद्र रहित है। नस-नाड़ी के साथ संबंध रूप बंधन से रहित है। अर्थात् वह निराकार है। यजुर्वेद के ३२ वें अध्याय के तीसरे मंत्र में भी इसका प्रमाण मिलता है **'न तस्य प्रतिमा अस्ति। स्यश नाम महद्यशः'** अर्थात् वह परमेश्वर बहुत बड़े यश वाला है उसकी कोई प्रतिमा नहीं होती। अर्थात् वह परमेश्वर निराकार ही है।

सर्वशक्तिमान- **'शतं सहस्रमयुतं न्यर्बुदमसंख्येयं स्वमस्मिन्निविष्टम्'** (अर्थव० १०/८/२४) उस परमेश्वर की सौ, सहस्र, दशसहस्र, दशकरोड़ और असँख्य शक्तियां हैं। **'प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।'** (ऋग्वेद१०/१२१/१०) हे परमेश्वर आपके अतिरिक्त इस जड़ चेतन जगत पर अन्य कोई नहीं अपना स्वामित्व नहीं कर सकता क्योंकि आप ही सर्वशक्तिमान हो आप ही इस समस्त ब्रह्मांड को सहज स्वभाव से अपने नियंत्रण में रखने वाले हो **'विश्वस्य मिषतो वशी'** (ऋग्वेद १०/१९०/२)

न्यायकारी- वह परमेश्वर न्यायकारी है। वह किसी के साथ कोई भेदभाव, पक्षपात नहीं करता है। वेद में उस परमेश्वर को अर्यमा कहा गया है। **'शन्नो भवत्वर्यमा'** (यजुर्वेद ३६/९) अर्थात् वह न्यायकारी परमेश्वर हम सब के लिए कल्याणकारी होवे। **'यदंग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि। तवेत्त् सत्यमंगिरः'** (ऋग्वेद १/१/६) परमेश्वर का यह अटल नियम है कि वह दानशील सत्पुरुषों के प्रति भलाई करता है। उनका कल्याण करता है और दुष्टों को दंड भी देता है इसलिए परमेश्वर न्यायकारी है।

दयालु- वह परमेश्वर परम दयालु है सब पर दया करने वाला है **'शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः'** अर्थात् वही परमपिता परमात्मा समस्त प्रकार के सांसारिक सुखों को देने वाला और मुक्ति सुख को देने वाला दयालु है। वही कल्याणकारी है वही सबका कल्याण करने वाला है।

अजन्मा- अर्थात् परमेश्वर कभी जन्म नहीं लेता वह कभी शरीर धारण नहीं करता **'शं नो अज एकपद्देवो अस्तु।'** (ऋग्वेद ७/३५/१३) वह अजन्मा परमेश्वर हमारे लिए सदैव कल्याणकारी होवे। **'उदीची दिक् सोमोधिपतिः स्वजो रक्षिताशनिरिषवः'** (अथवर्वेद ३/२७/४) अर्थात् उत्तर दिशा के अधिपति बनकर अजन्मा परमेश्वर सोम के रूप में हमारी रक्षा कर रहा है।

अनंत- वह परमेश्वर अनंत है। उसकी शक्ति, उसका सामर्थ, उसके ज्ञान की कोई सीमा नहीं। इसलिए वह परमेश्वर अनंत है। **'अनन्तं विततं पुरुत्रानन्तमन्तवच्च्या समन्ते'** (अथर्ववेद १०/८/१२) अनन्त परमेश्वर सर्वत्र फैला हुआ है। **'न यस्य देवा देवता न मर्ता आपश्च न शवसो अन्तमापुः।'** (ऋग्वेद १/१००/१५) अर्थात् मनुष्य विद्वान सूर्य चंद्रमा अथवा जल आदि भी उस ईश्वर के बल के अंत को नहीं प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि वह अनंत है। अर्थात् उसको पूरा-पूरा कोई भी नहीं जा सकता

शेष अगले पृष्ठ पर ....

पिछले पृष्ठ का शेष .... क्योंकि वह अनंत है।

निर्विकार- वह परमेश्वर निर्विकार है। उसमें गलना, सड़ना, फैलना, सिकुड़ना आदि विकार नहीं होते **'अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु।'** (ऋग्वेद ८/४७/९) अर्थात् अखंडनीय निर्विकार परमात्मा हमें उन्नत करें। **'ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः'** (ऋगवेद १/१६४/३९) अर्थात् उसी सर्वव्यापक, विकार रहित, अखंडनीय परमेश्वर, जो ऋग्वेद आदि से प्रतिपादित है, उसी में सूर्य, चंद्रमा,भूमि आदि सब स्थित हैं।

अनादि- वह परमेश्वर अनादि है। अर्थात् उसका कहीं से कोई प्रारंभ नहीं हुआ है। **'तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं'** अर्थात् मैं उस परमेश्वर को सौ वर्षों तक देखना चाहता हूं जो परमेश्वर इस सृष्टि के पूर्व भी विद्यमान था, अब भी विद्यमान है और सृष्टि के बाद भी विद्यमान रहने वाला है। अर्थात् जो अनादि है और सदा वर्तमान रहने वाला है।

अनुपम- अर्थात् उस परमेश्वर के जैसा कोई भी नहीं। उस परमेश्वर की किसी से उपमा भी नहीं दी जा सकती। उस परमेश्वर के जैसा कोई नहीं। वेद मंत्र में कितनी सरलता से उस परमेश्वर की श्रेष्ठता तथा अनुपमता का वर्णन किया है **'न कि ई इन्द्र त्वदुत्तरं न ज्यायो अस्ति वृत्रहन्। न क्येवं यथा त्वम्॥'** (सामवेद २०३) अर्थात् वह परमेश्वर अज्ञान का नाश करने वाला, विज्ञान और ऐश्वर्या को देने वाला है, कोई भी वस्तु उससे श्रेष्ठ नहीं, उस परमेश्वर से बड़ा कोई भी नहीं और ना ही संसार में कोई वस्तु उस परमेश्वर के जैसी है अतः वह परमेश्वर अनुपम है।

ब्राह्मण राज की भ्रांति

– आचार्य वर्चस्पति जी

हजारों साल पुराना इतिहास पढ़ते हैं। छुआछूत और जातिवाद के नाम पर मुगलों और अंग्रेजो द्वार समाज में घोला गया जहर पहले क्या था अब क्या है? जरूर पढ़े-

सम्राट शांतनु ने विवाह किया एक मछवारे की पुत्री 'सत्यवती' से। उनका बेटा ही राजा बने इसलिए 'भीष्म' ने विवाह न करके, आजीवन ब्रह्मचारी रहने की भीष्म प्रतिज्ञा की।

सत्यवती के बेटे बाद में क्षत्रिय बन गए, जिनके लिए भीष्म आजीवन अविवाहित रहे, क्या उनका शोषण होता होगा?

'महाभारत' लिखने वाले वेद व्यास भी मछवारन के बेटे थे, पर महर्षि बन गए, वे गुरुकुल चलाते थे।

'विदुर' जिन्हें महापंडित कहा जाता है वो एक दासी के पुत्र थे, 'हस्तिनापुर' के महामंत्री बने, उनकी लिखी हुई विदुर नीति, राजनीति का एक महान ग्रन्थ है।

भीम ने वनवासी 'हिडिम्बा' से विवाह किया।

श्रीकृष्ण दूध का व्यवसाय करने वालों के परिवार से थे, उनके भाई बलराम खेती करते थे, हमेशा हल साथ रखते थे।

यादव क्षत्रिय रहे हैं, कई प्रान्तों पर शासन किया और श्रीकृष्ण सबके पूजनीय हैं, गीता जैसा ग्रन्थ विश्व को दिया।

श्रीराम के साथ 'वनवासी निषादराज' गुरुकुल में पढ़ते थे। उनके पुत्र लव कुश महर्षि वाल्मीकि के गुरुकुल में पढ़े जो वनवासी थे।

तो ये हो गयी वैदिक काल की बात, स्पष्ट है कोई किसी का शोषण नहीं करता था, सबको शिक्षा का अधिकार था, कोई भी पद तक पहुंच सकता था अपनी योग्यता के अनुसार। वर्ण सिर्फ काम के आधार पर थे वो बदले जा सकते थे। जिसको आज इकोनॉमिक्स में डिवीजन ऑफ लेबर कहते हैं वो ही।

प्राचीन भारत की बात करें, तो भारत के सबसे बड़े जनपद मगध पर जिस नन्द वंश का राज रहा वो जाति से नाई थे। नन्द वंश की शुरुवात महापद्म नंद ने की थी जो कि राजा के नाई थे। बाद में वो राजा बन गए फिर उनके बेटे भी। बाद में सभी क्षत्रिय ही कहलाये।

उसके बाद मौर्य वंश का पूरे देश पर राज हुआ, जिसकी शुरुआत चन्द्रगुप्त से हुई, जो कि एक मोर पालने वाले परिवार से थे और एक ब्राह्मण चाणक्य ने उन्हें पूरे देश का सम्राट बनाया। 137 साल देश पर मौर्यों का राज रहा।

फिर गुप्त वंश का राज हुआ, जो कि घोड़े का अस्तबल चलाते थे और घोड़ों का व्यापार करते थे। 140 साल देश पर गुप्तों का राज रहा।

केवल पुष्यमित्र शुंग के 36 साल के राज को छोड़ कर 92% समय प्राचीन काल में देश में शासन उन्ही का रहा, जिन्हें आज दलित पिछड़ा कहते हैं तो शोषण कहां से हो गया? यहां भी कोई शोषण वाली बात नहीं है।

फिर शुरू होता है मध्यकालीन भारत का समय जो सन 1100-1750 तक है, इस दौरान अधिकतर समय, अधिकतर जगह मुस्लिम शासन रहा।

अंत में मराठों का उदय हुआ, बाजी राव पेशवा जो कि ब्राह्मण थे, ने गाय चराने वाले गायकवाड़ को गुजरात का राजा बनाया, चरवाहा जाति के होलकर को मालवा का राजा बनाया।

अहिल्या बाई होलकर खुद धनगर की बेटी थी बहुत बड़ी शिवभक्त थी, इंदौर में राज चलाया ढेरों मंदिर गुरुकुल उन्होंने बनवाये।

मीरा बाई जो कि राजपूत थी, उनके गुरु एक चर्मकार रविदास थे और रविदास के गुरु ब्राह्मण रामानंद थे। यहां भी शोषण वाली बात कहीं नहीं है।

मुगल काल से देश में गंदगी शुरू हो गई और यहां से पर्दा प्रथा, गुलाम प्रथा, बाल विवाह जैसी चीजें शुरू होती हैं।

1800-1947 तक अंग्रेजो का शासन रहा और यहीं से जातिवाद शुरू हुआ। जो उन्होंने फूट डालो और राज करो की नीति के तहत किया। अंग्रेज अधिकारी **निकोलस डार्क** की किताब **कास्ट ऑफ माइंड** में मिल जाएगा कि कैसे अंग्रेजों ने जातिवाद, छुआछूत को बढ़ाया और कैसे स्वार्थी भारतीय नेताओं ने अपने स्वार्थ में इसका राजनीतिकरण किया।

इन हजारों सालों के इतिहास में देश में कई विदेशी आये जिन्होंने भारत की सामाजिक स्थिति पर किताबें लिखी हैं, जैसे कि मेगास्थनीज ने इंडिका लिखी, फाहियान, ह्वेनसांग और अलबरूनी जैसे कई। किसी ने भी नहीं लिखा की यहां किसी का शोषण होता था।

जन्म आधारित जातीयव्यवस्था हिन्दुओ को कमजोर करने के लिए लाई गई थी। इसलिए अपने आप पर गर्व करें और घृणा, द्वेष और भेदभाव के षड्यंत्र से खुद भी बचें और औरों को भी बचावें।

आर्योद्देश्यरत्नमाला

प्रणेता - ऋषि दयानन्द
व्याख्याता - आचार्य परमदेव मीमांसक

व्याख्या-शास्त्रविरुद्ध गमन एवं वीर्य की व्यर्थता **व्यभिचार** तथा इसको छोड़ देना **'व्यभिचारत्याग'** है।

७७. जीव का स्वरूप- जो चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दु:ख और ज्ञान गुण वाला तथा नित्य है, वह **'जीव'** कहाता है।

व्याख्या-चेतन, अल्पज्ञ, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न और ज्ञान गुणधर्म वाले को जीव कहते हैं। ये जीव के स्वाभाविक गुण हैं। इस में इच्छा, द्वेष, प्रयत्न और ज्ञान नैमित्तिक रूप से भी बढ़ते हैं; पाप तथा पुण्यों के फल रूप में प्राप्त सुख एवं दु: ख तो नैमित्तिक ही हैं; ईश्वर के निमित्त से मोक्ष में आनन्द की उपलब्धि भी होती है। (जिज्ञासु इस विषय में अधिक ज्ञान हेतु सत्यार्थप्रकाश के नवम समुल्लास में प्रश्न-उस की शक्ति कै प्रकार की और कितनी है ? का उत्तर-कई बार पढ़ें, मनन और निदिध्यासन करें ।)

७८. स्वभाव-जिस वस्तु का जो स्वाभाविक गुण है जैसे कि अग्नि में रूप, दाह अर्थात् जब तक वह वस्तु रहे तब तक उसका वह गुण भी नहीं छूटता, इसलिये इसको **'स्वभाव'** कहते हैं।

व्याख्या- वस्तु का जो गुण उसके अस्तित्व रहने तक न छूटे वह उस का स्वाभाविक गुण कहलाता है और यही गुण उस वस्तु का **स्वभाव** कहाता है। जैसे अग्नि का गुण रूप और दाह है, जब तक अग्नि के परमाणु पृथक-पृथक होकर अपने कारण में नहीं लीन हो जाते तब तक अग्नि में रूप और दाह रहेगा; यही रूप और दाह अग्नि का **स्वभाव** है।

७९. प्रलय-जो कार्य -जगत् का कारण रूप होना अर्थात् जगत् का करने वाला ईश्वर जिन-जिन कारणों से सृष्टि बनाता है कि अनेक कार्यों को रचके यथावत् पालन करके पुन: कारणरूप करके रखना है, उसका नाम **'प्रलय'** है।

व्याख्या-जिस कारण द्रव्य से ईश्वर ने यह कार्यरूप सृष्टि बनायी थी उस का यथावत् पालन करके पुन: कारण रूप में करने को **प्रलय** कहते हैं।

८०. मायावी-जो छल, कपट, और स्वार्थ में ही प्रसन्नता, दम्भ, अहंकार, शठतादि दोष हैं, इसको **'माया'** कहते हैं और जो मनुष्य इससे युक्त हो, वह **'मायावी'** कहाता है।

व्याख्या-छल, कपट और स्वार्थ में ही प्रसन्नता का होना, दम्भ अर्थात् जिस बात को जाने नहीं परन्तु जानने का ढकोसला करना; घमण्ड; शठता अर्थात् धूर्तता अर्थात् सम्मुख ही कहना कुछ और करना कुछ रूपी मक्कारपना आदि जो दोष हैं, **'माया'** कहते हैं और जिस मनुष्य के भीतर ये दोष हों उसे **'मायावी'** कहते हैं।

८१. आप्त-जो छलादि दोष रहित, धर्मात्मा, विद्वान्, सत्योपदेष्टा, सब पर कृपादृष्टि से वर्त्तमान होकर अविद्यान्धकार का नाश करके अज्ञानी लोगों के आत्माओं में विद्यारूप सूर्य का प्रकाश सदा करे, उसको **'आप्त'** कहते हैं।

व्याख्या-जो यथार्थवक्ता, धर्मात्मा, सब के सुख के लिये प्रयत्न करता है, उसी को आप्त कहता हूँ।

(सत्यार्थप्रकाश-स्वम० प्रकाश)

छल, कपट और स्वार्थ आदि दोषों से रहित, धर्मात्मा, विद्वान्, सत्य का उपदेश करने वाला, यथार्थ को कहने वाला, सब पर कृपादृष्टि रखते हुए सब के सुख के लिये अविद्या-अज्ञान को दूर करके वेदानुकूल विद्या को जो सदा देने वाला हो उसे **'आप्त'** कहते हैं।

८२. परीक्षा-जो प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण, वेदविद्या, आत्मा की शुद्धि और सृष्टिक्रम से अनुकूल विचार के सत्यासत्य को ठीक-ठीक निश्चय करना है, उसको **'परीक्षा'** कहते हैं।

व्याख्या-'परीक्षा' पांच प्रकार की है। इसमें से प्रथम जो ईश्वर उसके गुण, कर्म, स्वभाव और वेदविद्या, दूसरी प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण, तीसरी सृष्टिक्रम, चौथी आप्तों का व्यवहार और पांचवीं अपने आत्मा की पवित्रता विद्या, इन पांच परीक्षाओं से सत्याऽसत्य का निर्णय करके सत्य का ग्रहण, असत्य का परित्याग करना चाहिये ।

(सत्यार्थप्रकाश-स्वम० प्रकाश)

क्या सत्य है? क्या असत्य है? क्या उचित है? क्या अनुचित है? क्या ग्रहण करने योग्य है? क्या छोड़ने योग्य है? क्या पढ़ना है? क्या पढ़ाना है? क्या हितकर है? और क्या हानिकर है? इत्यादि हजारों शंकाएँ होती हैं। इनके समाधान (निर्णय) के लिये विचार करना आवश्यक है, इस विचार वा चिन्तन की विधि यह है जिन से हम सत्य-असत्य का निर्णय (विवेक) कर सकते हैं-

१. प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण-प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिह्य, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव से सत्याऽसत्य का निर्णय होता है।

२. ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदविद्या-जीव को वैसे ही पवित्रता आदि गुणों को धारण करना चाहिये जैसे ईश्वर के हैं, ईश्वर जैसे ही उपकार के कर्म करने चाहिये, स्वभाव भी ईश्वर की तरह न्यायकारी रखना चाहिये; जब संशय हो तो ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव को अपना लेना चाहिये और उस से विपरीत छोड़ देना चाहिये। ईश्वर के गुण, कर्म, और स्वभाव का वर्णन वेद में है अत: यह सर्वमान्य सिद्धान्त हुआ कि कर्तव्य और अकर्तव्य के निर्णय में सब से बड़ा निर्णायक वेद है, इसलिये बिना किसी संशय के वेद की आज्ञा ग्राह्य एवं मान्य होनी चाहिये और इस से विपरीत सर्वथा त्याज्य।।

३. सृष्टिक्रम-जो सृष्टि के गुण, कर्म और स्वभाव के विरुद्ध हो वह मिथ्या और जो अनुकूल हो वह सत्य कहाता है। जैसे-कोई कहे कि श्रापमात्र से वह व्यक्ति भस्म हो गया तो यह सृष्टि के गुण के विरुद्ध होगा क्योंकि श्राप तो वाणी है, वाणी का गुण जलाना नहीं है अपितु बोध कराना है, जलाना गुण तो अग्नि का है; अत: श्राप से भस्म का होना सृष्टिनियम के विरुद्ध होने से असत्य और मानने के योग्य नहीं है।

४. आप्तों का व्यवहार-आप्त अर्थात् धार्मिक, विद्वान् आदि गुणों से सुशोभित व्यक्ति का जैसा आचरण हो वैसा ही स्वयम् आचरण करना चाहिये, उनका कार्य श्रेष्ठ होता है उसका अनुकरण करना चाहिये, उन का उपदेश, उनके द्वारा लिखे ग्रन्थ और उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त मानने के योग्य होते हैं, जो-जो वे करें और मानें वह सत्य और इससे विपरीत अनाप्तों का व्यवहार असत्य होता है।

क्रमश ....

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

इस सत्र में मुझे अनेक सत्य जानने को मिले हैं। ईश्वर का सही ज्ञान हुआ है। इस सत्र में मुझे समाज में फैले अंधविश्वासों के बारे में पता चला है। धर्म का सही मतलब पता चला है। आत्मा तथा परमात्मा के बारे में जानने का अवसर मिला है। समाज में फैले अंधविश्वासों के बारे में पता चला है। धर्म का सही मतलब मिला है। समाज में फैले मूर्ति-पूजा तथा आडम्बरों के बारे में पता चला।

नाम : अमन, आयु : २० वर्ष, योग्यता : १२, कार्य : विद्यार्थी, पता : जसौर खेड़ी, झज्जर, हरियाणा।

अपने आप को पहचाना। अपनी संस्कृति को पहचाना। धर्म बचाना, देश बचाना।

बहुत अच्छी शुरुआत है ज्यादा से ज्यादा लोगों को जोडेंगें। हमारे पूर्वजों, ऋषियों ने जो अध्ययन किया, जीवन को कैसे जिया जाए क्या लक्ष्य होना चाहिए मानव जीवन का वास्तविक लक्ष्य क्या होना चाहिये उसका विस्तार एवं चरित्र में जीना और चरितार्थ करना।

मैं तन मन धन से सहयोग करुँगा। मेरे योग्य जो जिम्मेदार दी जाएगी, राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा, मैं उसको पूरी तत्परता से पूरी करुँगा।

नाम : सुरजीत, आयु : ४६ वर्ष, योग्यता : बी.एस.सी., कार्य : बी.एस.एफ., पता : सैक्टर २४, रोहिणी, दिल्ली।

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	01 फरवरी	दिन-मंगलवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-श्रवण
पूर्णिमा	16 फरवरी	दिन-बुधवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-आश्लेषा
अमावस्या	02 मार्च	दिन-गुरुवार	मास-फाल्गुन	ऋतु-वसन्त	नक्षत्र-शतभिषा
पूर्णिमा	18 मार्च	दिन-शनिवार	मास-फाल्गुन	ऋतु-वसन्त	नक्षत्र-उ.फाल्गुनी

आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।